**ओ३म्**

**‘मैं और मेरा आचार्य दयानन्द’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 देश व संसार में अनेक मत-मतान्तर हैं फिर हमें उनमें से ही किसी एक मत को चुन कर उसका अनुयायी बन जाना चाहिये था। यह वाक्य कहने व सुनने में तो अच्छा लगता है परन्तु यह एक प्रकार से सार्थक न होकर निरर्थक है। हमें व प्रत्येक मनुष्य को यह ज्ञान मिलना आवश्यक है कि वह कौन है, कहां से आया है, मरने पर कहां जाता है, किन कारणों से उसे अपने माता-पिता से जन्म मिला, किसी धनिक के यहां जन्म क्यों नहीं हुआ, धनिक का निर्धन के यहां क्यों नहीं हुआ, किसने इस संसार को बनाया है और कौन इसका धारण, पोषण व संचालन करता है? संसार को बनाने वाली वह सत्ता कहां है, दिखाई क्यों नहीं देती, उसका नाम क्या है? क्या किसी ने कभी उसको देखा है? हम स्वयं अपनी मर्जी से पैदा नहीं हुए हैं, जिसने हमें उत्पन्न किया है, उसका हमें जन्म देने का उद्देश्य क्या था व है? **ऐसे अनेकानेक प्रश्नों के सही व समाधानकारण उत्तर जहां से प्राप्त हों व जिनसे जीवन का उद्देश्य जानकर उसकी प्राप्ति के सरल व समुचित साधनों का ज्ञान मिलता है, मनुष्य को उसी धर्म का धारण व पालन करना चाहिये।** ऐसा न करके मनुष्य अपने जीवन का सदुपयोग नहीं करता और हो सकता है व होता है, वह सुदीर्घ काल, सैकड़ों, हजारों व लाखों वर्ष तक नाना प्रकार के दुःखों व निम्न से निम्न योनियों में जन्म लेकर दुःखों से आक्रान्त रहे।

 हमने अपने मित्रों की प्रेरणा से पौराणिक परिवार में जन्म लेने पर भी आर्यसमाज के सत्संगों में भाग लेना आरम्भ किया और उसके साहित्य मुख्यतः सत्यार्थ प्रकाश, पंच-महायज्ञविधि आदि का अध्ययन किया। वैदिक विद्वानों व सच्चे महात्माओं के प्रवचनों को सुनकर व साहित्य को पढ़कर हमारे उपर्युक्त सभी प्रश्नों वच भ्रमों का समाधान हो गया जो अन्यथा नहीं हो सकता था। अतः हमारा कर्तव्य बनता था कि हमें जो सत्य ज्ञान मिला है, उससे हम अपने मित्रों व अन्यों को भी लाभान्वित करें। अतः इस कर्तव्य भावना से अधिकारी विद्वान न होने पर भी हमने अपना स्वाध्याय जारी रखा और लेखन के द्वारा अनेकानेक विभिन्न विषयों पर, जो जो हमें सत्य प्रतीत हुआ, उसे लोगों तक पहुंचाने का प्रयास किया। **आज हम अपने बारे में यह कह सकते हैं कि हम स्वयं से परिचित हैं।** मैं कौन हूं, क्या हूं, कहां से आया हूं, कहां-कहां जा सकता हूं, मेरे जीवन का उद्देश्य क्या है, उसकी प्राप्ति के साधन क्या हैं, यह संसार किससे बना और कौन इसे चला रहा है? **ऐसे सभी प्रश्नों का उत्तर मिला जिसका पूर्ण श्रेय मेरे आचार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती को है।** संक्षेप में हम इन सभी प्रश्नों के उत्तर इस संक्षिप्त लेख में देने का प्रयास करते हैं।

 मैं जीवात्मा हूं जो कि एक चेतन तत्व है। चेतन होने के कारण ही मुझे सुख व दुःख की अनुभूति होती है। मैं एकदेशी हूं अर्थात् व्यापक नहीं हूं। शास्त्रों ने जीवात्मा का परिमाण बताया है। यह अत्यन्त सूक्ष्म है। एक शास्त्रकार ने कहा है कि हमारे सिर के बाल का अग्रभाग लें, फिर उसके 100 टूकड़े करें, फिर इन सौ में से एक टुकडें के भी सौ टुकड़े करें, इसका एक टुकड़ा अर्थात् सिर के बाल के अग्रभाग का दस सहस्रवां टुकड़ा जीवात्मा के लगभग बराबर व उससे भी सूक्ष्म होगा। यह बात विचार, चिन्तन व गवेषणा से सत्य सिद्ध होती है। **मैं अर्थात् जीवात्मा अनादि, नित्य, अजर, अमर, अविनाशी व सत्यासत्य का जानने वाला होता है परन्तु अविद्यादि कुछ दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है। ज्ञान व कर्म जीवात्मा के दो लक्षण कहे जा सकते हैं। सृष्टिकाल में सभी जीवात्माओं को उनके पूर्व कर्मानुसार जन्म व भोग प्राप्त होते हैं।** इस जन्म में हमें जो माता-पिता, संबंधीं व अन्य परिस्थितियां, सुख-दुःख आदि मिले हैं वह अधिकांशतः पूर्व जन्मों के कर्मों के फलों जिसे प्रारब्ध कहते हैं व इस जन्म के क्रियमाण कर्मों के कारण प्राप्त हुए हैं। हमें जन्म, सुख-दुःख रूपी भोगों को देने वाली, वस्तुतः एक सत्ता ईश्वर है। ईश्वर ही सृष्टि को बनाने व धारण-पोषण अर्थात् संचालित करने वाली सत्ता है। ईश्वर परम धार्मिक है। वह सत्य, दया व करूणा से सराबोर है। उसके गुण, कर्म, स्वभाव सर्वदा समान रहते हैं, उनमें विपरीतता कभी नहीं आती। संसार में ईश्वर से इतर अत्यन्त सूक्ष्म मूल प्रकृति है, यह चेतन न होकर जड़ है। यह प्रकृति ईश्वर व जीव की ही तरह अनादि, नित्य, अविनाशी है तथा अत्यन्त सूक्ष्म, सत्व-रज-तम गुणों वाली है। यइ ईश्वर के अधीन होती है। इसे सृष्टि का उपादान कारण कहते हैं। ईश्वर इस सृष्टि का निमित्त कारण है। इस प्रकृति को ही ईश्वर परिवर्तित कर वर्तमान सृष्टि अर्थात् नाना सूर्य, चन्द्र, ग्रह, उपग्रह, पृथिवी आदि का निर्माण सृष्टि काल के आरम्भ में करता है। इसी प्रकार के निर्माण वह इससे पूर्व के कल्पों में करता रहा है तथा इस कल्प के बाद के कल्पों में भी करेगा। यह सृष्टि 4 अरब 32 करोड़ वर्षों तक इसी प्रकार से विद्यमान रहती है। इस गणना का आरम्भ ईश्वर द्वारा सृष्टि का निर्माण करने के दिन से होता है। इसके बाद पुरानी हो जाने के कारण इसकी प्रलय अवस्था आती है जब यह छिन्न भिन्न होकर अपनी मूल अवस्था, जो सत्व, रज व तम गुणों वाली अत्यन्त सूक्ष्म होती है, में परिवर्तित हो जाती है। यह प्रलयावस्था भी 4 अरब 32 करोड़ वर्षों तक रहती है, जो कि ईश्वर की रात्रि कहलाती है तथा जिसके पूरा होने पर ईश्वर पुनः सृष्टि बनाता है और प्रलय से पूर्व की जीवात्माओं को उनके कर्मानुसार वा प्रारब्ध के अनुसार मनुष्य, पशु, पक्षी आदि के रूप में जन्म देता है।

 ईश्वर के बारे में यह जानना भी उचित होगा कि ईश्वर सत्य, चित्त व आनन्द स्वरूप है। वह निराकार व सर्वव्यापक है। वह किसी एक स्थान, आसमान, समुद्र आदि में नहीं रहता अपितु सर्वव्यापक है। वह सर्वज्ञ अर्थात् सभी विषयों का पूर्ण ज्ञान रखता है और सर्वशक्तिमान है। वह न्यायकारी व दयालु भी है। वह सनातन, नित्य, अनादि, अनुत्पन्न, अजर, अमर, अभय, नित्य व पवित्र है। वह सर्वव्यापक व अतिसूक्ष्म होने के कारण सब जीवात्माओं के भीतर भी विद्यमान व प्रविष्ट है। अतः जीवात्मा का कर्तव्य है कि वह स्वयं व ईश्वर के सत्य स्वरूप को जाने। यह सत्य स्वरूप हमने **‘सत्यार्थ प्रकाश’** आदि ग्रन्थों से ही जाना है। अन्य सभी ग्रन्थों व मत-मतान्तरों की पुस्तकों को पढ़ने से अनेक सन्देह उत्पन्न होते हैं जिनका वहां निवारण नहीं होता। सत्यार्थ प्रकाश में सभी बातें, मान्यतायें व सिद्धान्त महर्षि दयानन्द जी ने वेदों व वैदिक ग्रन्थों से लेकर मानवमात्र के हित व सुख के लिए सरल आर्यभाषा हिन्दी में वेद प्रमाण, युक्ति व प्रमाणों आदि सहित प्रस्तुत की हैं। **यदि वह यह ग्रन्थ संस्कृत में लिखते तो फिर हम संस्कृत न जानने के कारण उससे लाभान्वित न हो पाते और तब हम अज्ञानी ही रहते और मत-मतान्तरों का अपना कारोबार यथापूर्व चलता रहता। हमारा कर्तव्य है कि हम ईश्वर को जानकर उसकी उपासना करें।** यद्यपि ईश्वर हमारी आत्मा में व्यापक है, अतः उपासना अर्थात् वह हमारे निकट तो सदा से है परन्तु उपासना में ईश्वर की स्तुति व प्रार्थना भी सम्मिलित है। यह स्तुति, प्रार्थना व उपासना ईश्वर के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन ही है जैसे कि किसी से उपकृत होने पर हम धन्यवाद कहते हैं। उपासना करने से हमारे गुण-कर्म-स्वभाव सुधर कर ईश्वर के गुणों के अनुरूप यथासम्भव हो जाते हैं। ईश्वर ने हमारे लिये यह विशाल संसार बनाया, इसे चला रहा है, इसमें हमारे सुख के लिए नाना प्रकार की भोग सामग्री बनाई है और हमें मानव जन्म व माता-पिता-बन्धु-बान्धव-इष्टमित्र-आचार्य-ऋषि आदि प्रदान किये हैं। अतः कृतज्ञता ज्ञापन करना हमारा कर्तव्य है अन्यथा हम कृतघ्न होंगे। यदि हम किसी की कोई सहायता करते हैं तो हम भी चाहते हैं कि वह हमारे प्रति कृतज्ञता का भाव रखे। इस भावना की अभिव्यक्ति का नाम ही उपासना है जिसमें स्तुति व प्रार्थना भी सम्मिलित है। **नियमित व यथार्थ विधि से उपासना करने से ही ईश्वर का जीवात्मा में साक्षात्कार भी होता है। यह अतिरिक्त फल उपासना का होता है।** ईश्वर साक्षात्कार की अवस्था के बाद जीवन मुक्ति का काल होता है जिसमें मनुष्य उपकार के कार्यों को करता हुआ कर्मों के बन्धन में नहीं फंसता और मृत्यु आने पर जन्म मरण से मुक्त होकर ब्रह्मलोक अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति करके ईश्वर के सान्निध्य से आनन्द का भोग करता है। यही जीवन का अन्तिम लक्ष्य है जो सच्चे ईश्वर को जानकर उपासना करने से प्राप्त होता है। **इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ही हमारा जन्म हुआ है। सृष्टि के आरम्भ से सभी ऋषि-मुनि व विद्वान इस पथ पर चले हैं और हमें भी उनका अनुकरण व अनुसरण करना है।** इस पथ पर चलने के लिए महर्षि दयानन्द की शिक्षा है कि हमारे सभी कार्य व व्यवहार सत्य पर आधारित होने चाहिये। वह सत्याचार को ही मनुष्यों का यथार्थ व अनिवार्य धर्म बताते हैं। इसके विपरीत असत्य व दुष्टाचार ही अधर्म है।

 ईश्वर, जीव व प्रकृति विषयक यह समस्त ज्ञान सृष्टि क्रम के अनुकूल व साध्य कोटि का है और वेदों व ऋषि मुनियों के जीवन व उनके सत्य उपदेशों से प्रमाणित है। इसके विपरीत ज्ञान व क्रियायें अज्ञान व मिथ्याचार हैं। **यह ज्ञान मुझे मेरे आचार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती से प्राप्त हुआ है।** महर्षि दयानन्द का जन्म गुजराज के राजकेाट जिले के एक कस्बे टंकारा में पिता श्री कर्षनजी तिवारी के यहां 12 फरवरी, सन् 1825 को हुआ था। 14 वर्ष की आयु में शिवरात्रि के दिन उन्होंने पिता के कहने से कुल परम्परा के अनुसार शिवरात्रि का व्रत किया था। देर रात्रि शिवलिंग पर चूहों को उछलते-कूदते देखकर उन्हें मूर्तिपूजा की असारता व मिथ्या होने का ज्ञान हुआ था। कुछ काल बाद उनकी एक बहिन व चाचा की मृत्यु होने पर उन्हें वैराग्य हो गया था। 21 वर्ष तक उन्होंने माता-पिता के पास रहते हुए संस्कृत, यजुर्वेद व अन्य ग्रन्थों का अध्ययन किया था। 22 वर्ष की अवस्था में वह सच्चे ईश्वर व मुक्ति के उपायों की खोज व उनके पालन के लिये गृहत्याग कर देशभर में विद्वानों, साधु-सन्यासियों, योगियों के सम्पर्क में आये। मथुरा में प्रज्ञाचक्षु गुरू विरजानन्द से उन्होंने आर्ष संस्कृत व्याकरण अष्टाध्यायी-महाभाष्य-निरुक्त प़द्धति से अध्ययन कर सन् 1863 में गुरू की आज्ञा से संसार से धार्मिक व सामाजिक क्रान्ति सहित समग्र अज्ञान व अन्धकार दूर करने के लिये कार्य क्षेत्र में प्रविष्ट हुए। उन्होंने मौखिक प्रवचन, उपदेश, व्याख्यान, शास्त्रार्थ, शंका समाधान, ग्रन्था लेखन द्वारा देश भर में घूम घूम कर प्रचार किया। प्रचार के निमित्त ही उन्होंने सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, ऋग्वेद-यजुर्वेद भाष्य संस्कृत व हिन्दी में, पंचमहायज्ञविधि, व्यवहारभानु, गोकरूणानिधि आदि अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन किया। नवम्बर, 1869 में उन्होंने काशी के 30 से अधिक शीर्षस्थ सनातनी विद्वानों से मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ कर उन्हें पराजित किया था। मूर्तिपूजा वेद सम्मत सिद्ध नहीं हो सकी थी न ही आज तक हो पायी है। उनके अनेक विरोधियों ने उन्हें जीवन में अनेक बार विष दिया। ऐसी ही विष देने की एक घटना जोधपुर में घटी। स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती के अनुसार इस षडयन्त्र में अंग्रेज सरकार भी सम्मिलित रही हो सकती है। इसके परिणाम स्वरूप 30 अक्तूबर, 1883 को दीपावली के दिन अजमेर में उनका देहावसान हो गया। उन्होंने जिस प्रकार से अपने प्राण त्यागे उससे लगता है कि यह कार्य उन्होंने शरीर के जीर्ण होने पर ईश्वर की प्रेरणा से स्वतः किया। स्वामी जी ने अज्ञान, अंधविश्वासों का खण्डन किया, सामाजिक विषमता को दूर किया, स्त्री व शूत्रों को वेदाध्ययन का अधिकार दिया, विधवाओं को पुनर्विवाह का अधिकार तथा समाज से सामाजिक विषमता और अस्पर्शयता को समाप्त किया। लोगों को ईश्वर व जीवात्मा का ज्ञान कराकर सच्ची ईश्वर भक्ति सिखाई और जीवन मुक्ति के लिए मृत्यु व मोक्ष के सत्य स्वरूप का प्रचार किया। देश की आजादी भी उनके प्रेरणाप्रद विचारों व आर्यसमाज के सदस्यों वा अनुयायियों के पुरूषार्थ की देन है।

  **मेरे आचार्य दयानन्द मेरे ही नहीं अपितु सम्पूर्ण संसार के आचार्य हैं। उन्होंने अज्ञानान्धकार में डूबे विश्व को सत्य ज्ञान रूपी अमृत ओषधि का पान कराया और उसे मोक्ष मार्ग पर अग्रसर होने की प्रेरणा की। मैं अपने आचार्य का कोटि कोटि ऋणी हूं। संसार के सभी लोग भी उनके ऋणी हैं परन्तु अपनी अविद्या, अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ व दुराग्रह आदि कारणों से उससे लाभ नहीं ले पा रहे हैं।** **संसार के प्रत्येक मनुष्य को महर्षि दयानन्द रचित साहित्य का अध्ययन कर, मत-मतान्तरों व अज्ञानी धर्मगुरूओं के चक्र में न फंस कर, अपने जीवन को सफल करना चाहिये। ईश्वर सबको सदबुद्धि प्रदान करें। महर्षि दयानन्द को कोटिशः नमन।**

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**